दैनिक जागरण

Date:15-05-23

हर प्रकार से लाभदायक हैं मोटे अनाज

विवेक देवराय और आदित्य सिन्हा, (देवराय प्रधानमंत्री की आर्थिक सलाहकार परिषद के अध्यक्ष और सिन्हा परिषद में अपर निजी सचिव-अनुसंधान हैं)

कथा सम्राट प्रेमचंद की कालजयी कृतियों में छोटे किसानों की दुर्दशा और सामाजिक-आर्थिक स्तर पर उनके संघर्ष का बहुत ही मार्मिक वर्णन मिलता है। चूंकि साहित्य को समाज का दर्पण कहा गया है तो ये सभी कथानक कहीं न कहीं भारत में अन्नदाता की दशा-दिशा का चित्रण भी करते हैं। अफसोस की बात है कि स्वतंत्रता के बाद भी किसानों की स्थिति में अपेक्षित रूप से सुधार नहीं हो पाया। इसके कई कारण रहे हैं। इनमें प्रमुख रहीं वे नीतियां, जिन्होंने संसाधनों का दोहन करने वाली खेती को बढ़ावा देकर बड़े किसानों को लाभ पहुंचाया। भारत में कृषि नीति का स्वरूप बेहद खराब रहा है, जिसमें स्पष्ट रूप से गेहूं और चावल पर जोर दिया गया। यह दृष्टिकोण न केवल भौगोलिक रूप से अनुचित है, बल्कि प्राकृतिक संसाधनों की दृष्टि से भी प्रतिकूल है, क्योंकि इसमें भूमि, जल और उर्वरक जैसे संसाधनों का भारी दोहन होता है। गेहूं-धान के लिए न्यूनतम समर्थन मूल्य यानी एमएसपी के साथ ही संसाधन-संपन्न खरीद प्रक्रिया और सार्वजनिक वितरण प्रणाली के माध्यम से वितरण ने बाजार में विकृतियों को जन्म दिया। हरियाणा और पंजाब जैसे राज्यों में यह प्रत्यक्ष रूप से दिखता है, जहां किसानों की पहली प्राथमिकता ही गेहूं और धान की खेती होती है, जिसे व्यापक रूप से सरकारी खरीद नीति से प्रोत्साहन मिला है। इससे अन्य फसलों की खेती बुरी तरह प्रभावित हुई और कृषि विविधीकरण को आघात पहुंचा है। पंजाब और हरियाणा में विशेष रूप से धान की खेती के पर्यावरणीय दुष्प्रभाव देखने को मिले हैं। इन क्षेत्रों में भूजल स्तर बहुत घटा है, क्योंकि इन फसलों में पानी की बहुत खपत होती है। खेती के इस चलन की एक बड़ी खामी यह भी है कि इससे मुख्य रूप से बड़े किसान ही लाभान्वित होते हैं। चावल और गेहूं के प्रति नीतिगत झुकाव ने इन फसलों के लिए बिजली, उर्वरक और सिंचाई सब्सिडी की उपलब्धता को सुव्यवस्थित किया है। इसके बावजूद एक सवाल यह उठता है कि क्या केवल इन दो फसलों पर हद से ज्यादा ध्यान देने से किसानों का कुछ भला हुआ है। जवाब है-नहीं।

इस प्रकार की परिपाटी ने केवल खेती का ही अहित नहीं किया है, बल्कि लोगों की खानपान की आदतों को भी बदला है, जिसके दुष्प्रभाव सेहत पर स्पष्ट रूप से दिखते हैं। गेहूं और चावल के चलते भारतीयों की थाली से ज्वार, बाजरा और अन्य पोषक खाद्य पदार्थ गायब होते गए। गेहूं और चावल में कार्बोहाइड्रेट की अधिक मात्रा होने से उनका सेवन कई बीमारियों को आमंत्रण दे रहा है। खासतौर से निष्क्रिय जीवनशैली वाले लोगों के लिए यह तमाम जोखिम बढ़ा रहा है। इस कारण मोटापा, मधुमेह और दिल से जुड़ी बीमारियां बढ़ती जा रही हैं। नगरीय क्षेत्रों में बिगड़ती जीवनशैली और सांस्कृतिक परिवर्तनों से यह खतरा और बढ़ गया है।

अच्छी बात है कि मोदी सरकार ने इस स्थापित हो चुकी परंपरा को बदलने के प्रयास आरंभ कर दिए हैं। सरकार कृषि विविधीकरण को बढ़ावा दे रही है। कई राज्य भी इसमें केंद्र सरकार के साथ ताल मिलाने के लिए आगे आए हैं। केंद्र सरकार ने मोटे अनाजों को बढ़ावा देने के लिए अंतरराष्ट्रीय स्तर पर भी आह्वान किया है। इन्हीं प्रयासों के चलते इस वर्ष को 'अंतरराष्ट्रीय मोटा अनाज वर्ष' के रूप में मनाया जा रहा है। प्रत्येक भारतीय की थाली में मोटे अनाजों की वापसी का विचार भी इस मुहिम के मूल में है। प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी ने हाल में मोटे अनाजों को न केवल छोटे किसानों के लिए लाभकारी, बल्कि खाद्य सुरक्षा, जीवनशैली से जुड़ी व्याधियों और जलवायु परिवर्तन की चुनौती से मुकाबला करने में बेहद उपयोगी बताया। उनका मानना है कि मोटे अनाजों की वैश्विक ब्रांडिंग भारत के 2.5 करोड़ छोटे एवं सीमांत किसानों की आजीविका को बड़ा सहारा देगी। इस प्रोत्साहन का ही परिणाम है कि 2018 से मोटे अनाज उत्पादक 12 राज्यों में प्रति व्यक्ति मोटे अनाजों का उपभोग दो से तीन किलो प्रतिमाह से बढ़कर 14 किग्रा हो गया।

मोटे अनाजों से मिलने वाले लाभों की सूची बहुत लंबी है। पोषक तत्वों से परिपूर्ण इन खाद्य उत्पादों में प्रोटीन, डाइटरी फाइबर, कई प्रमुख विटामिंस, आयरन, मैग्नीशियम, फास्फोरस और पोटेशियम जैसे कई महत्वपूर्ण खनिज होते हैं। इनका अपेक्षाकृत कम ग्लाइसेमिक इंडेक्स मधुमेह प्रबंधन में उपयोगी होता है। ये इम्युनिटी बढ़ाकर शरीर को रक्षा कवच भी प्रदान करते हैं। इन्हें पानी की किल्लत वाले शुष्क एवं अर्ध-शुष्क इलाकों में भी उगाया जा सकता है। पानी के उपयोग की अपनी किफायती प्रकृति के कारण ये पर्यावरण हितैषी भी हैं, जो परिस्थितियों से भली प्रकार अनुकूलित होने की क्षमता रखते हैं। कृषि जैव-विविधता में महत्वपूर्ण योगदान के अलावा ये खाद्य सुरक्षा को सुनिश्चित करने के साथ ही कीटों के हमले और बीमारियों से सुरक्षा में भी सहायक हैं। इससे कुछ फसलों पर अत्यधिक निर्भरता के जोखिम से बचाव भी संभव है। स्वास्थ्य की दृष्टि से महत्वपूर्ण होने के कारण इनका सही प्रचार किसानों को प्रीमियम दाम दिलाकर उनका आर्थिक कायाकल्प करने में भी सक्षम है। इनपुट के स्तर पर अपेक्षाकृत कम आवश्यकताओं की वजह से ये खेती के तौर-तरीकों में क्रांतिकारी परिवर्तन कर सकते हैं। अन्य फसलों की तुलना में कीटनाशकों और उर्वरकों की कम जरूरत किसानों पर आर्थिक बोझ घटाएगी और इससे पर्यावरण की रक्षा को बल मिलेगा। मोटे अनाजों की खेती और उपभोग में नए सिरे से तेजी भारतीय संस्कृति के साथ हमारी कड़ियों को भी जोड़ेगी, क्योंकि ये अनाज सदियों से भारतीय थाली का अभिन्न अंग रहे हैं। कुल मिलाकर, भारतीय कृषि नीति में यह नया रुख-रवैया खेती-किसानी और पोषण के मोर्चे पर नए परिवर्तन की आवश्यकता को मजबूती से रेखांकित करता है। इसलिए अधिक विविधतापूर्ण, टिकाऊ और स्वस्थ भारत की संकल्पना को साकार करने के लिए आवश्यक है कि मोटे अनाजों को दिए जा रहे प्रोत्साहन की गति एवं उत्साह को निरंतर तेजी मिलती रहे।

जनसत्ता

Date:15-05-23

जनादेश और संदेश

संपादकीय

कर्नाटक विधानसभा चुनाव के नतीजे हैरान करने वाले नहीं हैं। इसकी पृष्ठभूमि काफी पहले से बननी शुरू हो गई थी। इससे कांग्रेस को स्वाभाविक रूप से पुनर्जीवन मिला है। इसे लेकर वह काफी आशान्वित भी थी। सरकार बनाने के लिए जरूरी बहुमत से कहीं अधिक सीटें उसे मिली हैं, इस तरह उसके भविष्य को लेकर फिलहाल कोई आशंका नहीं है। इन नतीजों का विश्लेषण कई लोग अगले साल होने वाले आम चुनाव पर पड़ने वाले असर के पैमाने के रूप में कर रहे हैं। मगर लोकतंत्र में हर चुनाव की स्थितियां भिन्न होती हैं और उन्हें परस्पर जोड़ कर देखना कई बार धोखादेह साबित हो सकता है। हालांकि इस बात से इनकार नहीं किया जा सकता कि कर्नाटक चुनाव परिणाम भाजपा के लिए खतरे की घंटी की तरह आए हैं। उसने चुनाव प्रचार में अपनी सारी ताकत झोंक दी थी, मतदाताओं को अपनी तरफ खींचने का हर तरीका आजमाने की कोशिश की, मगर कामयाब नहीं हो पाई, तो उसकी वजहें भी साफ हैं। दरअसल, लोगों ने पहले ही मन बना लिया था कि भाजपा को सत्ता में नहीं आने देना है। जब मतदाता का ऐसा रुझान होता है, तो राजनीतिक दल चाहे, जितने भी तरीके आजमा लें, जितनी भी ताकत झोंक लें, उन्हें कामयाबी नहीं मिल पाती। हिमाचल प्रदेश में भी यही हुआ।

दरअसल, कर्नाटक में भाजपा सरकार के कामकाज को लेकर लोग खुश नहीं थे। सबसे अधिक नाराजगी भ्रष्टाचार की वजह से थी। चालीस प्रतिशत कमीशन की सरकार का जुमला उस पर काफी भारी पड़ा। सत्तापक्ष के कई नेता भ्रष्टाचार के मामलों में लिप्त पाए गए थे। फिर बेरोजगारी और महंगाई का मुद्दा भी भाजपा के खिलाफ गया। ये कुछ दाग ऐसे थे, जिन्हें धोना भाजपा के लिए आसान नहीं था, इसलिए उसने विकास का मुद्दा उठाया ही नहीं, जिसका बखान वह दूसरे राज्यों के चुनाव में करती रहती है। धार्मिक आधार पर ध्रुवीकरण करने का प्रयास करती रही, जो उसके खिलाफ ही गया। इसके उलट कांग्रेस बुनियादी और स्थानीय मुद्दों पर केंद्रित रही। राहुल गांधी की भारत जोड़ो यात्रा के समय ही कर्नाटक के लोगों का रुझान पता चल गया था। फिर सिद्धरमैया और डीके शिवकुमार जैसे कद्दावर नेताओं ने संगठित होकर जिस तरह काम किया, उसका प्रभाव पड़ा और कांग्रेस को उसका लाभ मिला। कांग्रेस अध्यक्ष मल्लिकार्जुन खड़गे का प्रभाव भी काम आया। इसके उलट, भाजपा में शुरू से ही असंतोष नजर आने लगा था। उसके कई वरिष्ठ नेता चुनाव के समय पार्टी छोड़ गए।

हालांकि कुछ लोग इन नतीजों को जातीय समीकरण के आधार पर हल करते देखे जा रहे हैं, मगर इसमें जद (सेकु) की फजीहत को भी नजरअंदाज नहीं किया जा सकता। दरअसल, कांग्रेस को सभी समुदायों का मत मिला। इस तरह स्पष्ट है कि कर्नाटक में कांग्रेस ने फिर से अपनी पुरानी जमीन वापस पाने में कामयाबी हासिल की है। उसे न केवल अल्पसंख्यकों, बल्कि अन्य पिछड़ी जातियों और दलित वर्ग का भी समर्थन हासिल हुआ है। इस नतीजे के पीछे केंद्र सरकार की नीतियों और कामकाज का असर भी देखा जा सकता है। इसलिए कई लोग इसके आधार पर आगामी आम चुनावों का आकलन कर रहे हैं। मगर कर्नाटक जैसी स्थितियां हर राज्य में नहीं हो सकतीं और न वैसा मिजाज हर राज्य के मतदाता का हो सकता है। उत्तर प्रदेश में स्थानीय निकाय चुनावों में भाजपा पर लोगों का अब भी भरोसा बना नजर आया है। पर स्पष्ट है कि भाजपा के लिए अब पहले की अतिउत्साह का समय नहीं रह गया है।

Live हिन्दुस्तान.com

Date:15-05-23

त्री-अभिभावक संतान

संपादकीय

विज्ञान की दुनिया में ऐसा बहुत कुछ चल रहा होता है, जिसकी जानकारी आम लोगों को नहीं होती है। ऐसी ही एक चौंकाने वाली सूचना ब्रिटेन से आई है। लगभग आठ साल बाद त्री-अभिभावक संतान के पैदा होने की घोषणा की गई है। माइटोकॉन्ड्रियल रिप्लेसमेंट तकनीक (एमआरटी) के रूप में जानी जाने इस वाली प्रजनन तकनीक को कानूनी मान्यता देने वाला पहला देश ब्रिटेन ही है। वहां 2015 में इस तकनीक को मान्यता मिली थी और उसके बाद करीब पांच बच्चों का जन्म अब तक हो चुका है। यूके फर्टिलिटी रेगुलेटर, ह्यूमन फर्टिलाइजेशन ऐंड एम्ब्रियोलॉजी अथॉरिटी (एचएफईए) ने इस नए वैज्ञानिक विकास की पुष्टि की है। इस समग्र प्रक्रिया या बच्चों के बारे में चिकित्सकों ने कुछ भी स्पष्ट नहीं बताया है। वैज्ञानिक इस आधुनिक विद्या पर लगातार काम कर रहे हैं। बच्चों को पैदा करने की इस असामान्य प्रक्रिया का ज्यादा प्रचार हो, यह वैज्ञानिक भी नहीं चाहते हैं। मोटे तौर पर एमआरटी का इस्तेमाल असाध्य बीमारियों की स्थिति में किया जा रहा है। किसी अभिभावक या जनक या जननी में गंभीर कमी की स्थिति में यह तकनीक कारगर हो सकती है। इसमें अमूमन एक पुरुष और दो महिलाओं का इस्तेमाल होता है।

महिलाओं में बढ़ती बांझपन की शिकायत का भी यह समाधान है। त्री-अभिभावक संतान पैदा करने की इस तकनीक का इस्तेमाल ज्यादातर माइटोकॉन्ड्रियल रोगों की स्थिति में किया गया है। नेचर में प्रकाशित शोध के अनुसार, इस रोग को अगली पीढ़ी या संतान में शून्य या न्यूनतम करने के लिए इस तकनीक का प्रयोग हुआ है। दुनिया में इस तकनीक को बहुत आदर से नहीं देखा जाता है, पर एक सूचना यह भी बताती है कि इस तकनीक से 1990 और 2000 के दशक की शुरुआत में भी बच्चे पैदा हुए हैं। आईवीएफ-आधारित प्रजनन विधा की यह अगली कड़ी है। इस सफलता को चमत्कारी रूप में देखा गया था, पर इसका प्रयोग अभी भी विवादास्पद बन हुआ है। नियामक एजेंसियां किसी मजबूत वजह की तलाश में हैं, ताकि इस तकनीक को बड़े पैमाने पर मान्यता दी जा सके। हालांकि, एक बड़ा खतरा है कि इसको अगर आसान या सहज उपलब्ध बनाया गया, तो इसका दुरुपयोग भी खूब हो सकता है। साथ ही, इस तकनीक से पैदा हुए बच्चों के अधिकार और उनके तीन-तीन अभिभावकों के अधिकारों व जिम्मेदारियों को लेकर भी समस्या पैदा हो सकती है।

अमेरिका में भी इस विधि को मान्यता हासिल नहीं है। हालांकि, साल 2015 में ही एक अमेरिकी वैज्ञानिक ने इस विधि से प्रजनन को संभव बनाया था, पर यह काम मैक्सिको की धरती पर किया गया था। विज्ञान के ऐसे विकास को लेकर उत्साह खूब है, तो विवाद भी हैं। ऑक्सफोर्ड विश्वविद्यालय के प्रजनन आनुवंशिकीविद् डेगन वेल्स कहते हैं कि यह रोमांचक खबर है, लेकिन पता नहीं, यह विधि वास्तव में काम कर रही है या नहीं? सवाल कई हैं और जवाब खोजने की जरूरत है । दरअसल, जब लोगों को ऐसे प्रजनन से लाभ मिलेगा या मानव जाति को वाकई किसी गंभीर रोग से मुक्ति मिलेगी, तो ही इसे बहुतायत में स्वीकार किया जाएगा। वैज्ञानिक बताते हैं कि बांझपन के इलाज के सिलसिले में ग्रीस

और यूक्रेन में किए गए माइटोकॉन्ड्रियल ट्रांसफर के माध्यम से भी बच्चे पैदा हुए हैं। पिछले साल, ऑस्ट्रेलिया भी इस तकनीक को मंजूर करने वाला दूसरा देश बन गया है। बेशक, लोगों को इसके व्यापक लाभ का इंतजार है।